BPSC 131 राजनीतिक सिद्धांत का परिचय

Solved Assignment 2020 Hindi medium

जुलाई 2019 और जनवरी 2020 सत्रों के लिए

Last Date for Submission - 30 April 2020 / 31 October 2020

For Written Notes and Solved Assignment Contact us - 8851761957

(What's app only)

YouTube channel - PS Study Center

Website - Psstudycenter.com

BPSC-131

कला स्नातक कार्यक्रम
(बी.ए.जी.)

सत्रीय कार्य

जुलाई 2019 और जनवरी 2020 सत्रों में
प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों के लिए के लिए

पाठ्यक्रम कोड : बी.पी.एस.सी. 131

राजनीतिक सिंद्धात का परिचय

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मैदान गढ़ी, नई दिल्ली – 110068

बी.पी.एस.सी. 131 : राजनीतिक सिद्धात का परिचय
शिक्षक मूल्यांकित सत्रीय कार्य

पाठयक्रम कोड : बी.पी.एस.सी. 131
सत्रीय कार्य कोड : ए.एस.टी./टी.एम.ए./ जुलाई 2019 और जनवरी 2020
कुल अंक : 100

यह सत्रीय कार्य तीन भागों में विभाजित हैं। आपको तीनों भागों के सभी प्रश्नों के उत्तर देने हैं।

सत्रीय कार्य - ए

निम्न वर्णनात्मक श्रेणी प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों (प्रत्येक) में दीजिए।

प्रत्येक प्रश्न 20 अंकों का है।

1) शक्ति के वैध प्रयोग पर एक लेख लिखें। 20

2) स्वतंत्रता पर जे.एस. मिल की संकल्पना का परीक्षण करें। 20

सत्रीय कार्य - बी

निम्न मध्यम श्रेणी प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों (प्रत्येक) में दीजिए।

प्रत्येक प्रश्न 10 अंकों का है।

3) अवसर की समानता क्या है। 10

4) जॉन राल्स के न्याय के सिद्धांत का वर्णन करें। 10

5) लोकतंत्र के क्रियात्मक (Procedural) और ठोस (Substantive) आयामों को विस्तार से बतायें। 10

सत्रीय कार्य - सी

निम्न लघु श्रेणी प्रश्नों के उत्तर लगभग 100 शब्दों (प्रत्येक) में दीजिए।

प्रत्येक प्रश्न 6 अंकों का है।

6) जेंडर का अर्थ 6

7) नागरिकता की अवधारणा 6

8) नागरिक समाज 6

9) लोकतंत्र और आर्थिक वृद्धि का अंतःसंबंध 6

10) सेंसरशिप (Censorship) 6

प्र. 1 शक्ति के वैध प्रयोग पर एक लेख लिखें।

उत्तर -

राज्य बल पर निर्भर करती है, परन्तु यह अकेले बल पर निर्भर नहीं करता है। यहाँ, शक्ति के वैध उपयोग की धारणा और शक्ति के वैध उपयोग का विचार आता है। शक्ति, सामान्य रूप से, और इसलिए राज्य की शक्ति को विभिन्न तरीकों से प्रयोग किया जा सकता है। दबाव शक्ति का रूप है और शायद समझने में सबसे आसान हैं, लेकिन यह केवल एक ही प्रकार का नहीं है। सभी शक्ति संबंधों को एक ही मूल प्रारूपों के आधार पर नहीं समझा जा सकता है। यदि तर्क और ज्ञान की ताकत के माध्यम से एक व्याख्याता छात्रों को अपने विचारों को बनाने में मदद करता है, तो ऐसा व्यक्ति एक प्रकार की शक्ति का प्रयोग करता है, हालांकि छात्रों की इच्छा के विरुद्ध नहीं। इस बिंदु से अधिक, सत्ता के सभी धारण उन लोगों को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं जो अपने शासन के अधीन होते हैं और जिस शक्ति को वे मिटा देते हैं, उसकी सत्यता और न्याय मे विश्वास करते हैं। लोगों की सहमति बनाने के लिए औचित्य का यह प्रयास वैधता की प्रक्रिया का गठन करता है। इसे सत्ता से अलग करने के लिए उचित या स्वीकृत शक्ति को सत्ता के रूप में संदर्भित किया जा सकता है, क्योंकि यह केवल प्रतिबंधों के डर के कारण था। वैध शक्ति, या अधिकार की ऐसी स्थिति में, लोग पालन करते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि ऐसा करना सही है। वे मानते हैं, जो भी कारण हो, कि शक्ति - धारकों को उनकी अग्रणी भूमिका की अनुमति है। उनके पास वैध अधिकार है, आदेश देने का अधिकार है। सत्ता के हाल के एक विश्लेषक के शब्दों में वैध प्राधिकरण एक ऐसा शक्ति संबंध है जिसमें सत्ता धारक के पास आज्ञा का अधिकार होता है, और शक्ति का विषय, एक आज्ञाकारिता का पालन करना हैं।

Solved Assignment, Written Notes - contact us - 8851761957 (What's app only)

वैधीकरण पर मैक्स वेबर के विचार

वेबर के अनुसार, तीन प्रकार के वैधीकरण हैं, अर्थात तीन विधियाँ, जिनके द्वारा, शक्ति के क्षेत्रीकरण को उचित ठहराया जा सकता है। पहला प्रकार पारंपरिक वर्चस्व से संबंधित हैं। फलस्वरूप, शक्ति उचित है क्योंकि सत्ता के धारण धारणा परंपरा और आदत के लिए अपील कर सकते हैं, अधिकार हमेशा व्यक्तिगत रूप से या उनके परिवारों में निहित होते हैं। दूसरा प्रकार करिश्माई वैधता है। नेता द्वारा प्रदर्शित असाधारण व्यक्तिगत गुणों के कारण लोग शक्ति - धारक की आज्ञा का पालन करते हैं। अंत में, तीसरा प्रकार कानूनी - तर्कसंगत प्रकार का है। लोग कतिपय व्यक्तियों की अज्ञाओं की आज्ञाओं का पालन करते हैं, जो कि विशिष्ट नियमों द्वारा, कड़ाई से परिभाषित सामाजिक वर्गों में कार्य करने के लिए अधिकृत हैं। कोई यह भी कह सकता है कि पहले दो प्रकार एक व्यक्तिगत प्रकृति के हैं, जबकि कानूनी - तर्कसंगत प्रकार एक प्रक्रियात्मक चरित्र को दर्शाता है।

वैधता : राजनीति विज्ञान का केंद्रीय सरोकार

ये वे कारण हैं जिनकी वजह से, सी राइट मिल्स कहते हैं, 'वैधता का विचार राजनीति विज्ञान की केन्द्रीय अवधारणाओं में से एक हैं।' राजनीति का अध्ययन उन तरीकों से केन्द्रित होता है, जिनके द्वारा सत्ता के धारक अपनी शक्ति को उचित ठहराने की कोशिश करते हैं और जिस सीमा तक वे सफल होते हैं। शक्ति न्यायसंगत हैं, और वे किस हद तक सफल होते हैं। किसी भी राजनीतिक प्रणाली का अध्ययन करने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि लोग मौजूदा शक्ति संरचना को उस कोटि के रूप में स्वीकार करने के लिए जाँच करें, और इस प्रकार, दबाव से अलग समझौते पर संरचना बाधित होती है। शक्ति के वास्तविक औचित्य का पता लगाना भी महत्वपूर्ण है, जो पेश किए जाते हैं, कहने का तात्पर्य यह है, कि वे विधियाँ जिनके द्वारा एक प्रणाली की शक्ति को वैध बनाया जाता है। यह, जैसा कि अभिजात्य सिद्धांतकार मोस्का बताते हैं, किसी भी राजनीतिक प्रणाली का 'राजनीतिक सूत्र' है। वैधता का प्रश्न, इसके अलावा, स्थिरता और राजनीतिक प्रणालियों के परिवर्तन के विषयों से

निपटने में अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

Solved Assignment, Written Notes - contact us - 8851761957 (What's app only)

अवैधीकरण की प्रक्रिया

यह बताता है कि क्यों एक क्रांति अक्सर एक ऐसी अवधि से पहले होती है जब संगठन के नियंत्रण विचार निरंतर आलोचना के विषय होते हैं इसे 'अवैधीकरण' की प्रक्रिया भी कहा जा सकता है, जिसके तहत विचार, जो कि शक्ति की मौजूदा संरचना को सही ठहराते हैं, हमले के दायरे में आते हैं। फ्रांस में प्राचीन शासन के पतन से बहुत पहले, दैवीय अधिकार और निरंकुशता के विचारों का दार्शनिकों, पूर्ण राज्य के आलोचकों ने उपहास और खंडन किया था। अवैधीकरण के इस तरह के आंदोलन ने पुरानी व्यवस्था की नींव को कमजोर करने में योगदान दिया। इसने अपनी क्रांति को उखाड़ फेंकने का रास्ता तैयार किया। एक मामला, आधुनिक समय में, वाइमर गणराज्य का हुआ है, जब जर्मन आबादी के बड़े हिस्से ने लोकतंत्रिक शासन में विश्वास खो दिया और कम्युनिस्ट विक्लप के डर से हिटलर की नेशनल - सोशलिस्ट पार्टी को अपना समर्थन दिया। नतीजा यह था कि बिना संघर्ष के गणतंत्र का पतन हो गया।

जोड़तोड़ की स्वीकृति या सहमति

विध्वंस विचारों को उत्पन्न होने से रोकने के लिए अभी भी अधिक प्रभावी तरीके उपलब्ध हैं। वे स्त्रोतों को बीच में रोक सकते हैं, वे स्त्रोत जो राजनीतिक सिद्धांत की धारण और उसके प्रति सचेत होते हैं, यहां तक कि अवचेतन मन के प्रति भी। सत्ता का एक महत्वपूर्ण आयाम लोगों की चेतना को प्रभावित करने और उन्हें ढालने की क्षमता है, ताकि वे वैकल्पिक संभावनाओं से अवगत हुए बिना मौजूदा मामलों की स्थिति को स्वीकार करेंगे। पहले सहमति है, फिर, सहमति में हेरफेर हो जाता है। एक निश्चित सीमा तक, हम सभी राज्य का वातावरण से प्रभावित है। ये ऊपर की तरफ बढ़ते हुए उंचाई एक ऐसी स्थिति की ओर ले जाता है जहाँ दिमाग काम करना बंद कर देता है, छलयोजना को एक अखंड लोकप्रिय मानसिकता बनाने के लिए राज्य काम करना बंद कर देता है, छलयोजना को एक अखंड लोकप्रिय मानसिकता बनाने के लिए राज्य का जानबूझकर उद्देश्य बनाया जाता है। ऐसा नाजी जर्मनी में गोएबल्स के प्रचार यन्त्र का उद्देश्य था, और यह अभी भी, किसी भी सर्वाधिकारवादी शासन का उद्देश्य है। सी. राइट मिल्स इसे ऐसे परिभाषित करते हैं, कि "हेरफेर या चालाकी शक्तिहीन के लिए अज्ञात शक्ति है।"

राज्य के प्रशासन के कार्मिक अभिजात वर्ग

लघु सर्वेक्षण से, हम अब तक राजनीतिक समस्याओं के हिस्सा हैं, कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु उभरते हैं, जो, निम्नलिखित चर्चा में पुनरावृत्ति करेगा। वे मुख्य रूप से इस तथ्य से उपजी हैं कि राज्य शक्ति संरचित है या टूट गई है, इसलिए अलग - अलग क्षेत्रों में बोलना चाहिए। यह पहले ही उल्लेख किया गया है कि विभिन्न क्षेत्रों के विशिष्ट संबंध राजनीतिक प्रणाली द्वारा निर्धारित किए जाते हैं, जिसके भीतर वे एक साम्यवादी राज्य की आंतरिक संरचना की तरह काम करते हैं। एक और प्रश्न में इन क्षेत्रों के कर्मियों को शामिल किया गया है। राज्य, आखिरकार, एक प्रशासन नहीं है, हालांकि 'राज्य का प्रशासन' वाक्यांश का उपयोग किया जा सकता है। राज्य उन लोगों द्वारा संचालित संस्थानों का एक समूह है, जिनके विचार और बुनियादी दृष्टिकोण बड़े पैमाने पर उनके मूल और सामाजिक वातावरण से प्रभावित हैं। राज्य अभिजात वर्ग की रचना राजनीति के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण समस्या है। जे. ए. सी. ग्रिफिथ ने अपनी पुस्तक " द पॉलिटिक्स ऑफ द ज्यूडिशियरी " में, अभिजात वर्ग के अर्थ को हाल ही के अध्ययन के सन्दर्भ में उदारहण देकर समझाया है। यह दर्शाता है कि ब्रिटेन में 'व्यापक रूप में, पांच पूर्णकालिक पेशेवर न्यायधीशों में से चार अभिजात वर्ग के उत्पाद हैं। यह आश्चर्यजनक नहीं है कि' राजनीतिक मामलों के बारे में न्यायिक

राज्य 'पर चर्चा करते हुए, ग्रिफिथ को इन मामलों में दृष्टिकोण की एक उल्लेखनीय स्थिरता मिलती है, जो कि राजनीतिक राय की सीमा के काफी संकीर्ण हिस्से में केन्द्रित हैं। "यहाँ यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोणों से, इस प्रश्न के अलग - अलग उत्तर दिए जाएंगे कि राज्य अभिजात वर्ग की प्रकृति और संरचना कितनी निर्णायक है। अभिजात वर्ग के सिद्धांत इस कारक को सबसे अधिक महत्व देते हैं। उनके परिप्रेक्ष्य में, एक राजनीतिक प्रणाली की प्रकृति को उसके अभिजात वर्ग के विश्लेषण से सबसे अच्छा समझा गया है, वह सत्तारूढ़ अल्पसंख्यक, जो राज्य तंत्र को नियंत्रित करता है।

Solved Assignment, Written Notes - contact us - 8851761957 (What's app only)

प्र. 2 स्वतंत्रता पर जे. एस.मिल की संकल्पना

उत्तर -

भूमिका - स्वतंत्रता की अवधारणा उदारवादी विचारधारा कामूल भाव है, जो सामान्यतौर पर 'नियंत्रण - अभाव के रूप में समझी जाती है। स्वतंत्रता - संबंधी धारणा आधुनिक यूरोप में ने सामाजिक - आर्थिक व राजनीतिक संबंधों की स्थापना के प्रसंग में जन्मी। उक्त धारणा के मूल में तर्कसंगत निर्णयों को लेने में सक्षम, एक समझदार व्यक्ति का विचारधारा। यह विवेकी व्यक्ति, यह सोचा गया, आत्म - निर्णय में सक्षम था, दूसरे शब्दों में, व्यक्ति उन निर्णयों को लेने में सक्षम था जो स्वयं उससे संबंध रखते थे। अपनी क्षमताओं को विकसित करने के लिए, व्यक्ति को सभी प्रकार के सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक नियंत्रणों से मुक्ति चाहिए थी। इस प्रकार, स्वतंत्रता की धारणा का विकास नियंत्रण - अभाव अथवा व्यक्ति की स्वायत्तता क्षेत्र के रूप में हुआ। साथ ही, तथापि, इस तथ्य को कि एक सामाजिक संगठन के भीतर व्यक्ति अकेला नहीं है और अन्य व्यक्तियों के साथ संबंध में ही अस्तित्व रखता है, इस बात की अपेक्षा थी कि स्वायत्तता संबंधी उनके क्षेत्रों पर अन्य व्यक्तियों का समान ही अधिकार होना चाहिए।

स्वतंत्रता की संकल्पना (Concept of Liberty):

जे. एस. मिल ने स्वतंत्रता के बारे में अपनी संकल्पना अपने प्रसिद्ध निबंध 'On Liberty-1859' के अंतर्गत प्रस्तुत की । जी.एम. सेबाइन के अनुसार, इस निबंध के अंतर्गत मिल ने ऐसे लोकमत (Public Opinion) के निर्माण पर बल दिया है जो सचमुच सहनशील हो, जो मत-मतांतर को महत्व देता हो, और जो मानवीय ज्ञान को आगे बढ़ाने के लिए नए विचारों का स्वागत करता हो ।

इसे बढावा देने के लिए ही उसने व्यक्तिवाद का प्रबल समर्थन किया । मिल के अनुसार, मानव व्यक्तित्व के विकास के लिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता (Individual Freedom) सर्वथा आवश्यक है ।

मिल के विचार से, व्यक्ति के कार्य दो प्रकार के होते हैं:

(1) 'आत्मपरक' कार्य (Self-Regarding Actions), जिनका सरकार स्वयं कार्य करने वाले से होता है- दूसरों पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता, और

(2) 'अन्यपरक कार्य' (Other-Regarding Actions), जिनका समाज पर सीधा प्रभाव पड़ता है ।

मिल ने तर्क दिया कि व्यक्ति के आत्मपरक कार्यों में राज्य की ओर से कोई हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए; और उसके अन्यपरक कार्यों में केवल उन्हीं कार्यों पर रोक लगाई जानी चाहिए जो दूसरों को हानि पहुँचाते हों, और यह बात प्रमाणित की जा सकती

हो ।

परंतु कभी-कभी ऐसी परिस्थितियाँ भी पैदा हो सकती है जब व्यक्ति के आत्मपरक कार्यों में हस्तक्षेप जरूरी हो जाए । उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति ऐसा पुल पार कर रहा हो जो हमारी जानकारी के अनुसार असुरक्षित हो, परंतु उस व्यक्ति को यह बात मालूम न हो तो हम उसे आगे बढ़ने से रोक दें-यही उचित होगा ।

स्वतंत्रता का अर्थ है, वह कार्य करना जिसे कोई व्यक्ति करना चाहता है, और उसे करना वह अपने लिए उचित समझता है । प्रस्तुत उदाहरण के अंतर्गत वह व्यक्ति नदी पार करना चाहता है, परंतु नदी में गिरना तो नहीं चाहता । वह यह नहीं जानता कि पुल पर चढ़ना खतरे से खाली नहीं है ।

अब, सुरक्षित रहने की इच्छा नदी पार करने की इच्छा से अधिक महत्वपूर्ण है । ऐसी हालत में उसे आगे बढ़ने से रोककर हम उसकी इच्छापूर्ति में बाधा नहीं डालते, बल्कि उसकी अधिक महत्वपूर्ण इच्छा की पूर्ति के हित में कम महत्वपूर्ण इच्छा पर रोक लगाते हैं ।

स्वतंत्रता की परिभाषा में इस संशोधन का अर्थ यह है कि व्यक्ति के अपने हित को सुरक्षित रखने के लिए राज्य उसके आत्मपरक कार्यों में भी हस्तक्षेप कर सकता है । मिल के इस तर्क में टी.एच. ग्रीन (1836-82) के विचारों का पूर्वाभास मिलता है ।

स्वतंत्रता के महत्व को रेखांकित करते हुए मिल ने विशेष रूप से तीन तरह की स्वतंत्रता पर बल दिया है:

PS study center
http://psstudycenter.com/

1. अंतरात्मा की स्वतंत्रता:

इसमें विचार और अनुभूति की स्वतंत्रता का विशेष स्थान है । मनुष्य को सभी विषयों पर-चाहे वे व्यावहारिक जीवन से जुड़े हों या चिंतन-मनन के क्षेत्र से, चाहे वे वैज्ञानिक हों, नैतिक या धर्मशास्त्रीय हों-कोई भी विचार या भावना रखने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए । विचार की अभिव्यक्ति और प्रकाशन की स्वतंत्रता भिन्न सिद्धांत पर आधारित है क्योंकि यह व्यक्ति के व्यवहार का ऐसा हिस्सा है जो दूसरों को प्रभावित कर सकता है । परंतु यह विचार की स्वतंत्रता की तरह महत्वपूर्ण है । यदि विचार को अभिव्यक्ति का अवसर नहीं मिलेगा तो विचार की स्वतंत्रता निरर्थक हो जाएगी ।

लोकतंत्र और सामाजिक प्रगति से जुड़ी हुई समस्या पर विचार करते हुए मिल ने 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' के महत्व पर विशेष बल दिया है । मिल यह दिखाना चाहता था कि लोकतंत्र की स्थापना से व्यक्ति की स्वतंत्रता की समस्या हल नहीं हो जाती बल्कि उसके लिए नए-नए खतरे पैदा हो जाते हैं ।

वह फ्रांसीसी लेखक अलेक्सी द ताकवील के इस विचार से सहमत था कि जनसाधारण बंधे-बंधाए तरीकों और बने-बनाये रास्तों पर चलना पसंद करते हैं- उन्हें नए विचारों और प्रयोगों में कोई दिलचस्पी नहीं होती । मिल को डर था कि जनसाधारण के हाथों में शक्ति आ जाने पर वे लीक से हटकर चलने वालों को आगे नहीं बढ़ने देंगे, और संपूर्ण समाज को औसत दर्जे के तौर -तरीके और विचार अपनाने के लिए विवश कर देंगे ।

इससे सामाजिक अनुरूपता, अर्थात् सभी व्यक्तियों को एक ही सांचे में ढालने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलेगा; नए तौर-तरीकों

और विचारों को हतोत्साहित किया जाएगा । अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को उचित ठहराने के लिए मिल ने उपयोगितावादी और नैतिकतावादी दोनों तरह के तर्क का सहारा लिया है । उपयोगितावादी तर्क के अनुसार, विवेकसम्मत ज्ञान सामाजिक कल्याण का आधार है । दूसरी ओर, नैतिकतावादी तर्क के अनुसार, वैयक्तिक आत्म-निर्णय मनुष्य का मूल अधिकार है जो उसमें नैतिक दायित्व की भावना विकसित करने के लिए अनिवार्य है ।

यदि व्यक्ति को परस्पर विरोधी विचारों में से अपनी अंतरात्मा के अनुसार चयन करने की स्वतंत्रता न हो तो एक नैतिक और विवेकशील प्राणी के नाते वह अपनी उपयुक्तता गरिमा से वंचित हो जाएगा । अतः समाज में परस्पर विरोधी विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आवश्यक सिद्ध होती है । मिल ने तर्क दिया कि अल्पमत को यहाँ तक कि अकेले व्यक्ति को भी-अपनी राय प्रकट करने का उतना ही अधिकार होना चाहिए जितना बहुमत को होता है । किसी भी मत का दमन करना सर्वथा अनुचित है, चाहे वह सच हो या झूठ हो । कोई बात इसलिए सच नहीं हो जाती कि उसे बहुत ज्यादा लोग मानते हैं, और इसलिए झूठ नहीं हो जाती कि उसे बहुत कम लोग मानते हैं ।

अतः सबसे पहले हर तरह के मत को प्रकट होने का अवसर मिलना चाहिए । यदि वह सच होगा तो उसका दमन करने से समाज सत्य के लाभ से वंचित हो जाएगा । यदि वह झूठ होगा तो उसका दमन करने से समाज सत्य के विस्तृत ज्ञान से वंचित हो जाएगा क्योंकि झूठ से टकराने के बाद सत्य अधिक स्पष्ट और प्रभावशाली रूप में सामने आता है । यदि वह कुछ सच और कुछ झूठ होगा तो उसकी अभिव्यक्ति हो जाने पर हमें संपूर्ण सत्य को जानने और समझने में सहायता मिलेगी । इस तरह परस्पर-विरोधी मतों के मुक्त प्रचार-प्रसार से समाज को लाभ ही लाभ है ।

2. अपनी अभिरुचियाँ विकसित करने और अपनी तरह का काम करने को स्वतंत्रता:

यह इसलिए जरूरी है ताकि मनुष्य अपने चरित्र के अनुरूप अपने जीवन की योजना बना सके । यदि दूसरों को उसका कोई काम मूर्खतापूर्ण, अस्वाभाविक या अनुचित लगता हो तो भी जब तक वह दूसरों को कोई हानि नहीं पहुँचाता, या वह स्वयं उसके लिए विनाशकारी न हो उसे वैसा करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए । मनुष्य को स्वयं जैसा अच्छा लगे वैसे जीकर कष्ट उठाने में जितना लाभ होगा, जैसा दूसरी को अच्छा लगे वैरने जीकर सुख पाने में उतना लाभ नहीं होगा ।

3. किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए संगठन बनाने की स्वतंत्रता:

शर्त यह है कि इससे किसी को भी क्षति न पहुँचाई जाए । संगठन बनाने वाले व्यक्ति वयस्क होने चाहिए ताकि वे सोच-समझ कर निर्णय करने में समर्थ हों । किसी को विवश करके या धोखा देकर किसी संगठन में सम्मिलित नहीं करना चाहिए । मिल ने लिखा है कि जिस समाज में कुल मिलाकर इन स्वतंत्रताओं का सम्मान नहीं किया जाता, वह स्वतंत्र समाज नहीं हो सकता चाहे वहाँ कोई भी शासन-प्रणाली क्यों न अपनाई जाए । जिस समाज में ये स्वतंत्रताएं पूर्ण रूप से और बिना शर्त प्रदान नहीं की जातीं वह पूर्णतः स्वतंत्र समाज नहीं हो सकता ।

जो मनुष्य बंधे-बंधाए तरीके से चलता है या केवल रीति-रिवाज का पालन करता है, वह अपने जीवन में चयन की क्षमता का प्रयोग नहीं करता । जो अपने जीवन की योजना का चयन दूसरों पर छोड़ देता है, उसे किसी विशेष क्षमता की जरूरत नहीं होती, वह तो बंदर की तरह दूसरों की नकल उतारता है । मनुष्य-जैसा जीवन जीने के लिए भिन्न-भिन्न लोगों को भिन्न-भिन्न ढंग से जीने देना चाहिए । अतः मिल की दृष्टि में विविधता का प्रसार स्वतंत्रता का स्वाभाविक लक्षण है ।

मिल का विश्वास था कि आधुनिक औद्योगिक समाज में जब अनुदारवादी शक्तियाँ प्रबल हो जाएंगी, तब स्वतंत्रता के बारे में

उसकी शिक्षाओं पर अवश्य ध्यान दिया जाएगा । मिल ने लिखा है कि औद्योगिक सभ्यता की प्रगति सब मनुष्यों के लिए एक-जैसी परिस्थितियाँ पैदा कर देती है जिससे उनके लिए भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के रूप में जीना मुश्किल हो जाता है ।

जो लोग सारे काम एक-जैसे करते हैं, वे एक ही तरह सोचने भी लगते हैं जिससे उनमें स्वयं सोचने की शक्ति कुंठित हो जाती है । मिल के इन विचारों में उस संकल्पना का पूर्वसंकेत मिलता है जिसे बीसवीं शताब्दी में जनपुंज समाज (Mass Society) की संज्ञा दी गई है । यह स्थिति जनसंपर्क के साधनों (Mass Media) की विलक्षण प्रगति का परिणाम है ।

देखा जाए तो औद्योगिक समाज का दबाव सब जगह एकरूपता को बढ़ावा देता है और सबसे एकरूपता की मांग करता है । जो व्यक्ति इस एकरूपता को चुनौती देता है और रीति-रिवाज के आगे घुटने टेकने से इनकार कर देता है, वह स्वतंत्रता के सिद्धांत की बहुत बड़ी सेवा करता है । इस तरह के मौलिक विचार प्रस्तुत करके मिल ने औद्योगिक समाज के प्रति अत्यंत मानवीय और लोकतंत्रीय दृष्टिकोण का परिचय दिया है ।

निष्कर्ष:

मिल ने व्यक्ति की स्वतंत्रता को सर्वोच्च महत्व देते हुए यह मत रखा कि राज्य को साधारणतः व्यक्ति की गतिविधियों में न तो हस्तक्षेप करना चाहिए, न उन पर कोई प्रतिबंध लगाना चाहिए परंतु यदि यह सिद्ध किया जा सके कि ऐसा हस्तक्षेप समाज के हित में जरूरी है तो उसे उचित ठहरा सकते हैं । ऐसी स्थिति को स्पष्ट करने के लिए मिल ने व्यक्ति की 'आत्मपरक' और 'अन्यपरक' गतिविधियों में अंतर किया, और यह स्वीकार किया कि यदि व्यक्ति की अन्यपरक गतिविधियों से समाज को हानि हो सकती हो तो उन पर प्रतिबंध लगाना उचित होगा । वैसे 'आत्मपरक' और 'अन्यपरक' गतिविधियों के बीच सीमा-रेखा खींचना बहुत कठिन है, और इस आधार पर अर्नेस्ट बार्कर ने मिल की आलोचना की है परंतु यह सीमा-रेखा कहाँ खींची जाए-इस बात का उतना महत्व नहीं। महत्व इस बात का है कि मिल ने ऐसे क्षेत्र की ओर संकेत किया जहाँ राज्य को तटस्थ नहीं रहना चाहिए बल्कि समाज के हित को ध्यान में रखते हुए सकारात्मक भूमिका निभानी चाहिए । इसी विचार ने उदारवादी चिंतन-परंपरा के अंतर्गत नकारात्मक राज्य को सकारात्मक राज्य में बदल दिया, और कल्याणकारी राज्य के विकास का रास्ता खोल दिया ।

मिल ने व्यक्ति की स्वतंत्रता का इतना भव्य विश्लेषण प्रस्तुत किया है कि-कम-से-कम उदारवादी चिंतन के अंतर्गत-उसकी दूसरी मिसाल मिलना मुश्किल है । उसका यह तर्क अत्यंत महत्वपूर्ण है कि व्यक्ति की स्वतंत्रता का दमन करके कोई राज्य अपना गौरव बढाने की आशा नहीं कर सकता । उसने स्वतंत्रता के सिद्धांत को उपयोगितावाद के साथ जोड़कर इसे बिल्कुल नए रंग में ढाल दिया । मिल को लोकतंत्र की प्रचलित अवधारणा में विशेष आस्था नहीं थी । उसने यह संकेत किया कि ऐसा लोकतंत्र राजनीतिक दृष्टि से समानता को समस्या को सुलझाकर स्वतंत्रता की समस्या को उलझा देता है । उसने 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' को सबरने आगे रखकर लोकतंत्र की इस त्रुटि को दूर करने का प्रयत्न किया । उसने लोकतंत्र के प्रचलित ढांचे को सुधारने के लिए ठोस सुझाव दिए । सबसे बढ़कर, उसने शासन की संस्थाओं में अल्पमत के समुचित प्रतिनिधित्व पर बल दिया ।

मिल ने अपने युग में न केवल मताधिकार के विस्तार की बात उठाई बल्कि स्त्रियों की पराधीनता पर प्रबल प्रहार किया । इस तरह उसने न केवल स्त्री जाति की गरिमा को मान्यता दी बल्कि समाज को भी उनकी प्रतिभा से लाभान्वित होने का रास्ता दिखाया । इस तरह आधुनिक राजनीति-सिद्धांत की परपरा में मिल का योगदान अविस्मरणीय रहेगा ।

प्र. 3 अवसर की समानता

PS study center
http://psstudycenter.com/

उत्तर -

सरल शब्दों में, अवसर की समानता का अर्थ है उन सभी अवरोधों को दूर करना जो व्यक्तिगत आत्म - विकास में बाधा डालते हैं। इसका अर्थ है कि पेशे या व्यवसाय प्रतिभावान व्यक्ति के लिए ही खुले होने चाहिए और तरक्कियाँ योग्यताओं पर आधारित होनी चाहिए। हैसियत, पारिवारिक संबंधों, सामाजिक पृष्ठभूमि व ऐसे ही अन्य कारकों का हस्तक्षेप नहीं होने देना चाहिए।

अवसर की समानता एक अत्यन्त आकर्षक धारणा है, जो उस बात से संबंधित हैं जिसका न्याय जीवन के आरम्भ बिन्दु के रूप में वर्णन किया जाता है। निहितार्थ यह है कि समानता यह अपेक्षा रखती है कि सभी व्यक्ति एक समान बिन्दु से जीवन शूरू करें। तथापि, यह जरूरी नहीं कि इसके परिणाम बिल्कुल भी समतावादी हों। यथार्थत : चूँकि हर व्यक्ति ने समान रूप से शुरूआत की, असमान परिणाम स्वीकार्य एवं वैध है। इस असमानता को तब भिन्न - भिन्न नैसर्गिक प्रतिभाओं, परिश्रम करने की क्षमता तथा भाग्य के भी शब्दों में स्पष्ट किया जाएगा।

यह लगता है कि इस तरह से बनी अवसर की समानता एक ऐसी व्यवस्था में प्रतिस्पर्धा करने का समान अवसर प्रदान करती है जो अनुक्रम आधारित रही है। अगर ऐसा है तो यह तत्वत : कोई समतावादी सिद्धांत प्रतीत नहीं होता । अवसर की समानता, इस प्रकार, एक असमतावादी समाज की ओर इशारा करती हैं, यद्यपि वह योग्यता के उच्च आदर्श पर आधारित है। यह धारणा स्वयं को प्रकृति और परम्परा के बीच भिन्नता पर आधारित करती है। तर्क यह है कि वे भिन्नताएँ जो प्रतिभाओं, कौशलों, कठोर श्रम इत्यादि जैसे विभिन्न प्राकृतिक गुणों के आधार पर प्रकट होती है, नैतिक रूप से समर्थनीय हैं । तथापि, वे भिन्नताएँ जो परम्पराओं अथवा गरीबी, आश्रयहीनता जैसे सामाजिक रूप से बने भेदों से पैदा होती हैं, समर्थनीय नहीं है। सच्चाई, हालाँकि, यह है कि यह एक विशिष्ट सामाजिक पक्षपात है जो समाज में भेदों को स्पष्ट करने के लिए सुन्दरता अथवा बुद्धिमता जैसी किसी प्राकृतिक भिन्नता को एक प्रासंगिक आधार बना देती है। तदनुसार हम देखते हैं कि प्रकृति व परम्परा के बीच भेद इतना सुस्पष्ट नहीं है जैसा कि समतावादी बतलाते हैं।

अवसर की समानता को प्रतिभाशाली व्यक्तियों के लिए पेशे या व्यवसाय खुले रखना, निष्पक्ष समान अवसर उपलब्ध कराना और सकारात्मक - भेदभाव सिद्धांत में बदलाव के माध्यम से संस्थापित किया जाता है। ये सब इस प्रकार काम करते हैं कि असमानता की व्यवस्था तर्कसंगत और स्वीकार्य लगे। निहित धारणा यह है कि जब से प्रतिस्पर्धा निष्पक्ष हुई है, लाभ अपने आप आलोचना से परे हो गया है। इस बात में कोई शक नहीं कि इस प्रकार की व्यवस्था ऐसे लोगों को जन्म देगी जो सिर्फ अपनी प्रतिभाओं एवं वैयक्तिक सहजगुणों पर ध्यान देंगे। यह बात उन्हें अपने लोगों के साथ किसी भी सामुदायिक अनुभूति से वंचित करती है, क्योंकि वे सिर्फ प्रतिस्पर्धा की भाषा में ही सोच सकते हैं। शायद, यह सिर्फ एक ऐसे समुदाय को जन्म दे सकती है जो एक ओर सफल व्यक्तियों का समुदाय होगा, और दूसरी ओर असफल व्यक्तियों का ऐसा समुदाय जो अपनी तथाकथित विफलता के लिए स्वयं को ही दोष देगा। अवसर की समानता के साथ एक और समस्या यह है कि वह एक पीढ़ी व दूसरी पीढ़ी की सफलताओं व विफलताओं के बीच बनावट वियोजन पैदा करने का प्रयास करती है।

Solved Assignment, Written Notes - contact us - 8851761957 (What's app only)

प्र. 4 जॉन राल्स के न्याय के सिद्धांत का वर्णन करें।

उत्तर

जॉन राल्स के न्याय का सिद्धांत

न्याय के सिद्धांत की व्याख्या सभी ने अपने अपने ढंग से की। उदारवादियो ने अपने तरीके से और माक्र्सवादियो ने अपने तरीके से। जॉन राल्स मूलतः एक उदारवादी था। उसने सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में विकसित राज्य के अनुबंधवादी सिद्धांत का समर्थन किया। जॉन राल्स की कृति 'ए थियरी ऑफ जस्टिस (1971)' उन दिनों प्रकाशित हुई जब उदारवाद बड़े

संकट के दौर से गुजर रहा था।

समझौता या अनुबंधवादी सिद्धांत

जॉन राल्स ने एक ऐसे काल की कल्पना की जब राज्य-संस्था का उदय नहीं हुआ था। और उसे प्राकृतिक अवस्था का नाम दिया।

राल्स प्राकृतिक अवस्था की बात करता है :-

राल्स के अनुसार प्राकृतिक अवस्था में रहने वाले लोग अज्ञान के पर्दे के पीछे बैठे हैं। लोगों को अपनी क्षमताओं और श्रेष्ठता की जानकारी नहीं थी।

व्यवस्था की जानकारी नहीं थी जिस में वह रहने का सोच रहा था। विवेकशील प्राणी थे। विकास में रूचि थी।

मनुष्य अपने विवेक का इस्तेमाल करके तीन निष्कर्षों पर पहुंचा:-

(1) एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था कायम की जाए जिसमे सभी को अधिकतम समान व स्वतंत्रता मिले।

(2) सभी को अवसरों की समानता मिले।

(3) व्यक्ति - व्यक्ति के बीच भेदभाव तभी उचित ठहराया जा सकता है जब यह साबित किया जा सके कि इससे "समाज के सबसे ज्यादा दीन - हिन" वर्ग की स्थिति अधिक अच्छी बनेगी।

इसी के आधार पर जॉन राल्स ने न्याय के सिद्धांत का प्रतिपादन किया जिसे 3 भागो में बांटा जा सकता है :-

प्रथम सिद्धांत : समान आधारभूत स्वतंत्रताएँ

जॉन राल्स के अनुसार उदार लोकतंत्र का विकल्प संभव नहीं है। इसलिए उदार लोकतांत्रीय सरकारें जिन अधिकारों वह स्वतंत्रताओं पर बल देती है वे निर्विवाद है।, जैसे:- विचार - स्वतंत्रता, धर्म अथवा अन्त :करण की स्वतंत्रता, संपत्ति का अधिकार, उत्पादन - साधनों पर निजी स्वामित्व तथा विवाह करने और कुटुम्ब स्थापित करने का अधिकार। राल्स ने बालिक मताधिकार पर आधारित संवैधानिक लोकतंत्र का समर्थन किया है। लोकतंत्र में चुनाव समय - समय पर होते हैं। जनसंपर्क माध्यमों पर सरकार का एकाधिकार नहीं होता और न्यायपालिका स्वाधीन होती है।

दूसरा सिद्धांत : अवसरों की समानता

जॉन राल्स ने पूँजीवादी व्यवस्था को न्यायसंगत ठहराया है। पूँजी का स्वामित्व निजी हाथों में होता है। उद्योग व कारखाने कायम करने के लिए अवसर मिलता है। इस व्यवस्था में उद्योगपति लाभ अर्जित कर सकते हैं।

* लेकिन इस के साथ साथ राल्स ने कुछ महत्वपूर्ण बाते आवश्यक बताई और कहा कि सरकार सक्षम और प्रभावी होनी चाहिए ताकि वह निम्न कार्यों को संपन्न कर सके

(1) बाजार प्रतियोगि बनी रहे। इसी से चीजों की कीमतों और मजदूरी की दरों को तय किया जा सकता है।

(यदि इन चीजों पर उद्योगपतियों का अधिकार हो गया तो व्यवस्था खराब हो जाएगी। उन का एकाधिकार हो जाएगा, मजदूरों का शोषण होना)

(2) भौतिक साधनों तथा प्राकृतिक पदार्थ को बर्बाद नहीं किया जाना चाहिए।

(3) संपत्ति और धन का वितरण होना चाहिए।

(4) न्याय का अर्थ है सभी लोगों की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा किया जाए।

(5) सभी को ऊँचा उठने, अपना विकास करने के समान अवसर दिया जाए। शिक्षा कि व्यक्ति की जाए।

न्याय का तीसरा सिद्धांत : आय का पुनर्वितरण

लॉक ने संपति के अधिकार को प्राकृतिक अधिकार माना और इस अधिकार पर लॉक को जरा भी पाबंदी मंजूर नहीं था। लेकिन राल्स प्राकृतिक अधिकार में विश्वास नहीं रखता। राल्स ने कहा कि एक व्यक्ति अपनी क्षमताओं और कौशल से जो कुछ भी संपत्ति कमाता है उस संपत्ति पर केवल उस का अधिकार नहीं है। राल्स ने कहा कि कौशल और निपुणता हासिल करने के लिए श्रेष्ठ चारित्रिक गुणों कि आवश्यकता होती है जो कि एक व्यक्ति को अपने परिवार से मिलता है तो व्यक्ति इस का सारा श्रेय खुद कैसे ले सकता है।

इसके अलावा व्यक्ति जो कुछ भी प्राप्त करता है शिक्षा, कौशल, हुनर उन सब के पीछे परिवार के साथ साथ पूरे समाज का भी योगदान होता है। इस लिए यह आवश्यक है कि समाज की भलाई के लिए आय और संसाधनों का समाज में समान रूप से वितरण हो ताकि सामुहिक हित की प्राप्ति कि जा सके।

राज्य इसी प्रक्रिया के द्वारा समाज के धनी वर्ग के लोगों से उन के आय का एक हिस्सा कर के रूप में लेती है और उस धन से देश की सुरक्षा, यातायात, संचार आदि कि सुविधा को उपलब्ध करवाती है। इसके साथ राज्य शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, बेकारी भता आदि की भी व्यवस्था करती है। इस प्रकार आय का पुनर्वितरण हो जाता है। राल्स कहता है कि आय का हस्तांतरण इस प्रकार होना चाहिए कि हस्तांतरण ज्यादा से ज्यादा समाज के दीन- हीन लोगों तक पहुंच सके।

प्र. 5 लोकतंत्र के क्रियात्मक (Procedural) और ठोस (Substantive) आयामों को विस्तार से बतायें।

उत्तर -

लोकतंत्र के दो भिन्न आयामों से ठीक तरीके से समझा जा सकता है - प्रक्रियात्मक और ठोस (वास्तविक)। प्रक्रियात्मक आयाम अपना ध्यान केवल लोकतंत्र प्राप्ति की प्रक्रिया अथवा साधनों पर केन्द्रित करता है। इसका तर्क है कि सार्वजनिक व्यस्क मताधिकार पर आधारित नियमति प्रतिस्पर्धी चुनाव और बहुत राजनीतिक सहभागिता के माध्यम से लोकतांत्रिक रूप से चयनित सरकार बनती है। जोसफ स्चुम्पेटर ने 1942 में अपनी पुस्तक 'कैपिटलज्म, सोशलिज्म और डेमोक्रेसी' कहा है कि लोकतंत्र राजनीतिक निर्णयों तक पहुँचने का एक संस्थात्मक व्यवस्थापन है जिसमें व्यक्ति प्रतिस्पर्धात्मक संघर्ष के माध्यम से लोगों के मत प्राप्त कर निर्णय करने की शक्ति प्राप्त करता है। हंटिगटन ने भी इसी तरह के विचारों को प्रतिबिंबित किया है, " लोकतंत्र की केन्द्रीय प्रक्रिया उन लोगों द्वारा प्रतिस्पर्धी चुनाव के माध्यम से नेताओं का चयन है, जो शासित होते हैं। "हालांकि, न्यूनवादी विचार के माध्यम से नेताओं का चयन है, जो शासित होते हैं। हालांकि, न्यूनवादी विचार में चुनावी भागीदारी के

अलावा लोगों को निष्क्रिय माना जाता है और इस प्रकार से वे अपने प्रतिनिधियों द्वारा शासित होते हैं। इस दृष्टिकोण का जोर इस बात पर है कि कैसे एक लोकतांत्रिक सरकार का चुनाव करें, नाकि स्वतंत्रता और आजादी पर। व्यवस्था में 'नियंत्रण और संतुलन' के अभाव में निर्वाचित नेता अपने लाभ के लिए प्रक्रियाओं और शक्तियों में हेर - फेर कर अधिनायकवादी बन सकते हैं। एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में ऐसी सरकार जो लोगों के लिए कार्य कर सकती है। इस तरह की घटनाओं का अस्तित्व 1980 और 1990 के बीच अर्जेंटीना और ब्राजील में देखने को मिला। यद्यपि वहाँ समय - समय पर चुनाव होते रहते हैं परन्तु शक्तियों के एक व्यक्ति के हाथों में केन्द्रित होने के कारण मध्य एशियाई देशों की सरकारों को भी प्रक्रियात्मक लोकतंत्रों की श्रेणी में रखा जा सकता है।

वास्तविक लोकतंत्र (ठोस लोकतंत्र) प्रक्रियात्मक लोकतंत्र की कमी को दूर करने का प्रयास करता है, इसका मानना है कि सामाजिक और आर्थिक असमानता लोकतंत्रिक प्रक्रिया में जनसहभागिता में बाधा हो सकती है। शासन करने के बजाय, वास्तविक अर्थों में यह अपना ध्यान सामाजिक समानता सामान्य - हित की बात करता है। पुनर्वितरणात्मक न्याय के माध्यम से वांछित वर्ग यथा - महिलाओं और गरीबों के अधिकारों की रक्षा की जा सकती है और ऐसी परिस्थिति का निर्माण राज्य द्वारा हस्तक्षेप के माध्यम से ऐसे वर्गों की राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदारी सुनिश्चित करके की जा सकती है। विभिन्न राजनीतिक विज्ञानी यथा जॉन लॉक, जीन जैक्स रूसो, इमैनुअल कांट, जॉन स्टुअर्ट मिल ने इस दृष्टिकोण के विकास में अपना योगदान दिया ऊ। स्चुम्पेटर का विश्वास है कि लोकतंत्र की ऐसी संकल्पना जो समानता के महत्वकांक्षी स्वरूप को अपना लक्ष्य मानती है खतरनाक है। इसके विपरित रूसो का तर्क है कि लोकतंत्र का औपचारिक प्रकार दास - प्रथा के समान है और केवल समतावादी लोकतंत्र ही राजनीतिक वैधता को प्राप्त है।

प्र. 6 जेंडर का अर्थ

PS study center
http://psstudycenter.com/

उत्तर -

जेंडर शब्द समाजशास्त्री रूप से अथवा एक संकल्पनात्मक श्रेणी के रूप में प्रयोग किया जाता है और इसका अर्थ बहुत ही विशिष्ट है। अपने नए रूप में जेंडर शब्द का पुरूष और महिलाओं की सामाजिक - सांस्कृतिक परिभाषा के रूप में प्रयोग नया जन्म किया जाता है। कैसे समाज इनको पुरूषों और महिलाओं के नाम से अलग करता है और इसी आधार पर इनको सामाजिक भूमिका का कार्य प्रदत्त करता है। इसका प्रयोग महिलाओं और पुरुषों की सामाजिक वास्तविकताओं को समझने के लिए किया जाता है। लिंग और जेंडर के बीच अंतर उस सामान्य प्रवृत्ति को निरस्त करने के लिए प्रस्तुत किया गया जो महिलाओं की अधीनता को उनके शारिरिक रचनातंत्र से जोड़ता है। यह युगों से विश्वास किया जाता रहा है कि इनकी विशेषताएँ, भूमिका और स्तर का निर्धारण जैविक आधार पर किया जाता है जोकि एक प्राकृतिक सत्य है तथा इसलिए, इसमें परिवर्तन नहीं हो सकता है। प्रत्येक संस्कृति में बालिकाओं और बालकों के मूल्यांकन का अपना एक मार्ग है, और इनको अलग - अलग भूमिका प्रतिक्रिया और लक्षण प्रदान करने का। सभी सामाजिक और सांस्कृतिक " पैकेजिंग ", जोकि बालिकाओं और बालकों के जन्म से ही आरंभ हो जाती हैं, उसे जेंडर संबद्ध (gendering) कहते हैं।

एन्ना ओकले - जो कि प्रथम कुछेक नारीवादी विद्वानों में से एक हैं जिन्होंने इस संकल्पना का पहली बार प्रयोग किया था, कहती हैं कि " जेंडर एक संस्कृति का मामला है, जो कि पुरुष और महिला के सामाजिक वर्गीकरण को पुरुषत्व और नारीत्व के रूप में संदर्भित करता है। " लोग सामान्यतः जैनिक साक्ष्यों के आधार पर निर्धारित करते हैं कि कौन पुरूष या महिला हैं। इसके साथ यह भी है कि वे इसी ही प्रकार से पुरूषत्व या नारीत्व का निर्धारण नहीं कर सकते हैं : क्योंकि इसका पता लगाने के लिए आधार सांस्कृतिक और समय तथा स्थान का विभेद हो सकता है। इसके साथ ही लिंग की स्थिरता की स्वीकृति है, परन्तु जेंडर का विभेद हो सकता है। जेंडर की उत्पत्ति जैविक नहीं होती है और लिंग तथा जेंडर के बीच सम्बन्ध प्राकृतिक भी नहीं होता है।

PS study center
http://psstudycenter.com/

प्र. 7 नागरिकता की अवधारणा

उत्तर-

नागरिकता किसी व्यक्ति या संप्रभु राज्य के कानूनी सदस्य या राष्ट्र के अंग के रूप में मान्यता प्राप्त व्यक्ति या कानून के तहत मान्यता प्राप्त व्यक्ति की स्थिति है। एक व्यक्ति के पास कई नागरिकताएं हो सकती है और एक व्यक्ति जिसके पास किसी भी राज्य की नागरिकता नहीं है, को राज्यविहीन कहा जाता है। 'नागरिक' शब्द को संकीर्ण या व्यापक अर्थो में समझा जा सकत है।

संकीर्ण अर्थ - इसका अर्थ है कि एक शहर का निवासी या वह व्यक्ति जो किसी शहर में रहने का विशेषाधिकार प्राप्त करता है।

व्यापक अर्थ - व्यापक अर्थ में नागरिक का अर्थ है सहमति कि एक व्यक्ति जो राज्य की क्षेत्रीय सीमाओं के भीतर रहता है। नागरिकता और राष्ट्रीयता कानूनी अर्थों में एक समान हैं। वैचारिक रूप से, नागरिकता राज्य के आंतरिक राजनीतिक जीवन पर केंद्रित है और राष्ट्रीयता अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार का विषय है। आधुनिक युग में, पूर्ण नागरिकता की अवधारणा न केवल सक्रिय राजनीतिक अधिकारों , बल्कि पूर्ण नागरिक और सामाजिक अधिकारों को शामिल करती है। ऐतिहासिक रूप से, एक राष्ट्रीय और एक नागरिक के बीच सबसे महत्वपूर्ण अंतर यह है कि नागरिक को निर्वाचित अधिकारियों को वोट देने और निर्वाचित होने का अधिकार है। पूर्ण नागरिकता और अन्य छोटे संबंधों के बीच यह अंतर, प्राचीन काल में वापस ले जाता है। 19वीं और 20 वीं शताब्दी तक, यह केवल उन लोगों के एक छोटे प्रतिशत के लिए विशिष्ट था जो किसी शहर या राज्य के पूर्ण नागरिक होने से संबंधित थे। अतीत में, अधिकांश लोगों को लिंग, वर्ग, जातीयता, धर्म या अन्य कारकों के आधार पर नागरिकता से बाहर रखा गया था।

नागरिकता का स्वरूप

विभिन्न परिप्रेक्ष्यों से जुड़ी नागरिकता की अनेक परिभाषाएँ है। जनसामान्य में व्याप्त अधिकारों एवं कर्तव्यों वाले राजनीतिक समुदाय की सदस्यता के रूप में नागरिकता को माना जा सकता है। यह सदस्यता सक्रिय या तटस्थ दोनों तरह की हो सकती है। तटस्थ सदस्यता वाले नागरिक अधिकारों एवं दायित्वों के निर्माण में कोई सक्रिय भूमिका नहीं निभाने के बाद भी हकदार होते हैं। किन्तु सक्रिय नागरिकता में समुदायों के राजनीतिक जीवन से संबंधित अधिकारों एवं दायित्वों में सक्रिय भाग लेना शामिल हैं। यद्यपि राज्य सभी को कुछ अधिकार प्रदान करता है, परन्तु नागरिकों को कुछ विशेष अधिकार प्राप्त होते हैं, जो गैर - नागरिकों को प्राप्त नहीं होते।

अधिकांश राज्य मताधिकार का एवं विदेशियों को सार्वजनिक कार्यालय बनाने की अनुमति नहीं देते। आरम्भ में जो अधिकार केवल सम्पन्न लोगों तक सीमित थे, वे आज हम नागरिकों को अधिकार के रूप में प्राप्त हैं। प्रजातांत्रिक प्रक्रियाओं ने सीमावर्ती, प्रजातीय समूहों, अल्पसंख्यक महिलाओं एवं विकलांग व्यक्तियों की नागरिकता के हित और दायित्वों के प्रति अगुवाई की। किसी राज्य के नागरिक के पास इतने अधिकार होते हैं, जो विदेशियों के पास नहीं हो सकते। राज्य तटस्थ सदस्यता के अन्तर्गत सीमित कानूनी अधिकारों एवं व्यापक सामाजिक अधिकारों को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सक्रिय सदस्यता नागरिक मध्यस्थता, प्रजातंत्र और नागरिकों की भागीदारी से संबंधित होती है। राष्ट्र - राज्यों में राजनीतिक समुदायों के सदस्य नागरिक होते हैं।

नागरिक का अधिकार सर्वमान्य व अपरिहार्य है। यह जरूरी नहीं है कि समुदाय से जुड़े अधिकारों को सीमित कर दिया जाये। कई समाजों में अल्पसंख्यक भी विशेष अधिकारों का लाभ उठाते हैं, फिर भी नागरिकों के समान अधिकारों पर समूहों अधिकारों के साथ विवाद की स्थिति है। नागरिकता एक विशेष प्रकार की समानता को प्रमाणित करती है। यह आर्थिक समानताओं तथा सांस्कृतिक मतभेदों को भी स्वीकार कर सकते हैं, परन्तु गुणात्मक असमानताओं को नहीं, क्योंकि इसमें किसी पुरुष या महिला को उनकी मूल आवश्यकताओं एवं दायित्वों के आधार पर अलग - अलग स्थान दिया जाता है। नागरिकता व्यक्तियों को सामाजिक विरासत का अधिकार प्रदान करती है। इस आधार पर यह सार्वजनिक कार्यक्रमों तथा प्रतिष्ठानों तक व्यक्तियों की समान पहुँच एवं भागीदारी का प्रयास करती है।

नागरिकता व्यक्ति के भीतर के जीवन का तरीका कोई बाह्म वस्तु नहीं है। इसलिए नागरिकता पर विधिसंगत सीमाएँ भी है। नागरिकता के द्वारा कर्त्तव्य तथा अधिकार दोनों ही प्रभावित होते हैं।

नागरिकता तीन प्रकार की मानी जा सकती है :

(1) सिविल (असैनिक)

(2) राजनीतिक

(3) सामाजिक

PS study center
http://psstudycenter.com/

(1) सिविल आयाम - इसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता, भाषण, विचार एवं विश्वास की स्वतंत्रता, व्यक्तिगत संपत्ति पर अधिकार की स्वतंत्रता एवं न्यायसंगत व्यवस्था हेतु संघर्ष करने का अधिकार शामिल हैं। व्यक्ति कानून के अंतर्गत दूसरों के साथ समानता के विषय में अपने दावों की रक्षा करते हुए उन पर अपना अधिकार स्थापित करता है। न्यायालय प्रमुख रूप से सिविल अधिकारों से जुड़े हुए हैं। कार्य करने का अधिकार मौलिक सिविल अधिकार है। व्यक्ति अपनी रूचि के अनुसार अपना व्यवसाय चुन सकता है।

(2) राजनीतिक आयाम - इसमें राजनीतिक सत्ता के कार्यों में भाग लेने का अधिकार शामिल हैं, जैसे मतदान का अधिकार, राजनीतिक विशेषाधिकार, राजनीतिक नेतृत्व की अपेक्षा एवं समर्थन, न्याय और समानता के पक्षधरों का समर्थन तथा अनुचित राजनीतिक व्यक्ति के विरूद्ध संघर्ष आदि।

(3) सामाजिक आयाम - इसमें आर्थिक कल्याण एवं सुरक्षा, सामाजिक विरासत में भाग लेना तथा समाज - विशेष में प्रचलित मानकों के आधार पर जीवन जीने का अधिकार आता है। इसके अन्तर्गत मनुष्य स्वयं एक विशेष जीवन - यापन करने का अधिकार है।

प्र. 8 नागरिक समाज

उत्तर -

नागरिक समाज का अर्थ और प्रकृति

नागरिक समाज के अन्तर्गत परिवार के बाहर की वे सभी संस्थाएँ आती हैं, जिन्हें व्यक्ति अपने हितों के संवर्द्धन और सुरक्षा के उद्देश्य से बनाते हैं। इसके अंतर्गत सभी संस्थाएँ विशेषकर स्वयंसेवी संघ, सामाजिक आंदोलन तथा सार्वजनिक संचार के रूप सम्मिलित हैं। संक्षेप में, नागरिक समाज राज्य से पृथक होते हुए भी एक समानान्तर क्षेत्र हैं, जहाँ नागरिक अपने हितों की रक्षा के लिए एकत्रित होते हैं। इसके अन्तर्गत मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारा, गिरिजाघर, रामलीला कमेटियां, आर्य समाज, सनातन धर्म सभा तथा जातिगत संस्थाएँ जैसे ब्राह्मण समाज, लोधी समाज, नारी समाज, धर्मशाला, विश्वविद्यालय, विधालय, अध्यापकों, वकीलों और डॉक्टरों के संगठन तथा वे सभी संगठन आते हैं जो विभिन्न व्यक्ति अपने हितों की रक्षा के लिए बनाते हैं। सारांश के रूप में राज्य और सरकार को छोड़कर सभी संगठन नागरिक समाज के अन्तर्गत आते हैं। ये सामाजिक संगठन व्यक्ति और राज्य के मध्य की स्थिति होते हैं। इसके अंतर्गत परिवारिक जीवन तथा आध्यात्मिकता आदि नहीं आती है।

नागरिक समाज की उल्लेखनीय विशेषताएँ

नागरिक समाज व्यक्ति या निजी की अपेक्षा सार्वजनिक लक्ष्यों से संबंधित होता है। नागरिक समाज का लक्ष्य संगठन के रूप में शक्ति ग्रहण न कर शक्ति की संरचना में सुधार लाना होता है।

ऐतिहासिक विकास

इसका ऐतिहासिक विकास अत्यंत शीघ्रता से द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुआ, क्योंकि साम्यवादी देशों में राज्य का वर्चस्व था और केवल एक साम्यवादी दल का प्रभुत्व था। अतएव नागरिकों को सामाजिक कार्यों में भाग लेने का अवसर नहीं मिल पाता था। प्रजातंत्रवादी राज्यों में धार्मिक संगठन, सामाजिक संगठन कार्य के अनुसार संगठित होते थे, परंतु साम्यवादी राज्यों में इनको रोका जाता था। अतएव जनता में असंतोष उत्पन्न हो गया और यह असंतोष निरंतर बढ़ता ही चला गया। अतएव सोवियत यूनियन तथा उसके अधीन पूर्वी यूरोप के देशों में इतना असंतोष बढ़ा कि वे सोवियत यूनियन से पृथक हो गए और सोवियत यूनियन स्वयं 16 देशों में बिखर गया अतएव अब नागरिक समाज का प्रभाव बहुत अधिक माना जाने लगा है।

प्रमुख अंशदाता

नागरिक समाज के विकास में विभिन्न व्यक्तियों ने और विचारकों ने योगदान दिया है। रोमन साम्राज्य में इसके विकास का आरम्भ हुआ।

श्रेष्ठ राजनीतिक अर्थशास्त्री एडम स्मिथ ने राज्य के नागरिक समाज के सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। उसने व्यक्तिवाद, सम्पत्ति तथा बाजार को प्राथमिकता देकर नागरिक समाज का विकास किया तथा राज्य की शक्ति की सीमायें निर्धारित की।

हेजल : नागरिक समाज और राज्य - हेजल ने नागरिक समाज को पृथक पहचान दी तथा इसे आर्थिक व्यवस्था से अलग माना। अतः धार्मिक संगठन तथा अन्य सभी संगठन नागरिक समाज के अन्तर्गत माने गए।

नागरिक समाज के बारे में मार्क्स के विचार - मार्क्स का कथन है कि नागरिक समाज बुर्जुआ वर्ग के साथ आया तथा उसके अनुसार यह झगड़ों तथा विवादों की जड़ है, जिनकी अभिव्यक्ति प्रतिस्पर्धा, अहंकार और निजीकरण के रूप में होती है। उसने वास्तविक मानवता पर आधारित समाज की धारणा प्रस्तुत की है और नागरिक समाज का विरोध किया है।

नागरिक समाज के बारे में ग्रामस्की के विचार - ग्रामस्की के अनुसार नागरिक समाज वर्चस्व तथा आधिपत्य का

एक भाग है, जिसमें राजनीतिक तथा सांस्कृतिक दोनों नेतृत्व निहित होते हैं। ग्रामस्की ने नागरिक समाज की भूमिका को महत्व दिया है। उसके अनुसार संस्थाएँ नागरिकों को समाज में व्यवहार के नियमों से परिचित कराती है और उन्हें यह शिक्षा देती हैं कि शासक वर्ग के प्रति स्वाभाविक सम्मान का भाव रखना चाहिए। बुर्जुआ समाज अपनी स्थिरता के लिए नागरिक समाज की संरचनाओं पर आश्रित होते हैं। अत: यदि कहीं नागरिक समाज असहमति प्रकट करता है, तो उसके दमन के लिए बल प्रयोग किया जाता है। यह बल प्रयोग बुर्जुआ वर्ग के पक्ष में राज्य द्वारा सेना, पुलिस, न्यायालयों और अधिकारियों के द्वारा किया जाता है।

नागरिक समाज और राज्य

नागरिक समाज राज्य से अलग होते हुए भी एक समानान्तर क्षेत्र हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ नागरिक अपने हितों तथा इच्छाओं के अनुसार इकट्ठे होते हैं। नागरिक समाज को सामान्य रूप से 'समाज' की अपेक्षाकृत व्यापक अवधारणा से भिन्न समझे जाने की आवश्यकता है क्योंकि इसमें व्यक्तिगत तथा पारिवारिक जीवन और अन्तरमुखी समूह गतिविधियों, जैसे- धार्मिक पूजा, आध्यात्मिकता आदि द्वारा प्रतिनिधित्व प्राप्त संकीर्ण समाज को नागरिक समाज के दायरे में नहीं माना जाता है।

इसी प्रकार व्यक्तिगत कारोबार वाली फर्मों में उद्यम कर के मुनाफा कमाने वाले रूप में आर्थिक समाज को भी नागरिक समाज के दायरे से बाहर माना जाता है। नागरिक समाज को राजनीतिक समाज से भी भिन्न किए जाने की आवश्यकता है। लोकतंत्र में राजनीतिक दलों तथा अभियान दलों तथा संगठनों द्वारा प्रतिनिधित्व प्राप्त संगठनों जो कि राज्य के नियंत्रण को प्राप्त करने के लिए आकांक्षा रखते हैं उनको भी नागरिक समाज से भिन्न समझा जाना चाहिए।

प्र. 9 लोकतंत्र और आर्थिक वृद्धि का अंत : संबंध

PS study center
http://psstudycenter.com/

उत्तर -

लोकतंत्र और विकास

लोकतंत्र एक सजीव संकल्पना है, कोई जड़ गतिहीन धारणा नहीं। विभिन्न जातियों और राष्ट्रों ने विभिन्न देश - कालों में उसकी अलग अलग परिभाषाएँ की है और परिभाषाएँ समाज विशेष की आवश्यकताओं और विकास की अवस्थाओं के अनुरूप बनी है। लोकतंत्र के आदर्श मे प्रगति और सिद्धि का स्तर इस बात पर निर्भर करता है कि समुदाय विशेष पर किन आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक कारणों का प्रभाव पड़ता रहा है। विकास के संदर्भ में राष्ट्रों की प्राय : तीन श्रेणियाँ की जाती है - विकसित राष्ट्र, विकासशील राष्ट्र और अल्पविकसित राष्ट्र। इस श्रेणी विभाजन का आधार है आर्थिक विकास का स्तर और उसकी गति। यह श्रेणी विभाजन लोकतंत्र के संदर्भ में भी लागू हो सकता है और हम लोकतंत्र के विकास के स्तर तथा गति के अनुरूप विकसित, विकासशील और अल्पविकसित लोकतंत्रों का उल्लेख करते हैं। लोकतंत्र की संकल्पना की भाँति ही विकास की संकल्पना की भी राजनीति, सामाजिक और आर्थिक पहलू है। विकास के लिए किसी न किसी प्रकार का सुव्यवस्थित आयोजन अनिवार्य है, यद्यपि यह आवश्यक नहीं कि उसे किसी वाद से संबद्ध किया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि उपलब्ध संसाधनों तथा विकास की आवश्यकताओं के बीच उपयुक्त तालमेल बिठाया जाए। विकास सदैव और सभी समाजों में एक अविच्छन्न प्रक्रिया रहा है और प्रत्येक देश का प्रत्येक समाज में कुछ न कुछ विकास होता रहता है लेकिन जिस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन - सत्य का अंततः स्वयं ही साक्षात्कार करना होता है, उसी प्रकार प्रत्येक राष्ट्र को अपनी प्रवृत्ति, परंपराओं के अनुरूप स्वयं ही अपने विकास पथ का संधान करना पड़ता है और जो राष्ट्र जिस सीमा तक इस लक्ष्य में सफल हो जाता है, वह उसी सीमा तक अपनी नियति का निर्माण भी स्वत : कर पाता है।

उपनिवेश काल के बाद के समाजों में लोकतंत्र और विकास

विश्व की लोकतांत्रिक प्रणाली में उपनिवेशवाद की समाप्ति के बाद के समाजों में लोकतंत्र अपनी ऐतिहासिक विशिष्टताओं के कारण उदार लोकतंत्र के समान विकसित नहीं हुआ है। इनका बहुत हद तक असंतुलित आर्थिक विकास था। लैटिन अमेरिका के विद्वानों द्वारा किए गए अध्ययन से यह पता चलता है कि आर्थिक विकास की ऊँची दर से प्राय : लोकतंत्र की अपेक्षा सतावाद की स्थापना हुई है, क्योंकि सामान्यतया आर्थिक विकास से अमीर और गरीब के बीच की दूरी बढ़ी है। उस दुश्चक्र से बाहर निकलने का मार्ग ढूंढ लेना ही कई देशों में वास्तविक चुनौती बन गई है जो अभी तक विद्यमान है और जिसमें निरंकुश शासन प्रणाली नियमित रूप से तेजी से अपनी चमक - दमक खोती जा रही है और इसके विकल्प के रूप में बिना आधार के प्रजातंत्र उभर रहे हैं।

वस्तुतः उपनिवेशवाद के समाज बहुसांस्कृतिक है और वे जातीय एवं प्रजातीय संघर्षों से विदीर्ण होते हैं तथापि निष्कर्ष के रूप में यह कहना गलत होगा कि लोकतंत्र केवल वही कायम रह सकता है जहाँ आर्थिक विकास का स्तर ऊँचा हो। सभी महाद्वीपों में ऐसे देशों के उदाहरण देखने को मिल जाएंगे जिन्होंने आर्थिक विकास कि निम्न स्तर होने के बावजूद दशकों से प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रतिस्पर्धा और नागरिक और राजनीतिक स्वतंत्रता को कायम रखा है यथा - भारत, श्रीलंका, जमैका और वोत्सवाना। नवोदित लोकतांत्रिक देशों की सरकारों को सामाजिक विकास को बढ़ावा देना चाहिए और आरम्भ में विकास का स्तर चाहे जो कुछ भी हो, सत्तत आर्थिक विकास संबंधी नीतियों को जारी रखना चाहिए, ताकि समाज के विभिन्न वर्ग इस विकास कार्य से लाभान्वित हो सके और संघर्ष की तीव्रता को कम किया जा सके एवं आर्थिक प्रगति से लोकतंत्र के लिए स्वस्थ वातावरण का निर्माण हो सके।

भारत में राजनीतिक लोकतंत्र और आर्थिक विकास - 1947-1967

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आम चुनाव के माध्यम से 1952 में कांग्रेस ने लोकतंत्रिक शासन की स्थापना की। इस समय कांग्रेस दल में गौरवशाली और प्रबुद्ध सासंद थे, जो अच्छे वक्ता होने के साथ संसदीय प्रक्रिया के भी अच्छे थे और अपने विषय के विद्वान थे। इस समय आर्थिक नियोजन का लक्ष्य जनसाधारण के जीवन स्तर को सुधारना तथा अधिक सुचारू एवं विविधतापूर्ण जीवन का अवसर प्रदान करना था दूसरी पंचवर्षीय योजना के लक्ष्यों को सामाजिक परिवर्तन के आधार पर प्रस्तुत किया गया, परंतु आम जनता केवल उत्पादन वृद्धि और औद्योगीकरण से संतुष्ट नहीं थी, फिर भी 1957 के चुनाव में कांग्रेस सुधारों को नियोजन का आधार मान लिया गया तथा तीसरी पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य तीव्र आर्थिक विकास, रोजगार के अवसरों को बढ़ाना, आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण पर रोक और स्वतंत्र तथा समानतापूर्ण सामाजिक लक्ष्य की स्थापना पर जोर दिया गया।

किन्तु 1962 में चीनी आक्रमण, 1965 में पाकिस्तान से युद्ध के कारण रक्षा व्यय में अचानक वृद्धि हो गई और 1965 - 67 के भयंकर सूखे के कारण अनाज की कमी हो गई। दूसरी तरफ अमेरिका ने भारत की सहायता राशि कम कर दी तथा अन्य कई कारणों से नियोजन में सिमित विरोधाभास तथा अस्थिरता के तत्व दिखाई दे रहे थे, जिससे 1967 के चुनाव में कांग्रेस के समर्थन एवं सफलता मे कमी आई।

भारत में राजनीतिक लोकतंत्र और आर्थिक विकास 1990 में और उससे

आगे

नवीं लोकसभा में भारतीय जनता पार्टी एवं वामपंथी दलों के सहयोग से श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व में जनवरी, 1990 को अल्पमत सरकार सत्ता में आई। इसने एक समयबद्ध कार्यक्रम बनाया, जिसमें निवेश वाले साधनों का 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र में लगाने, किसानों को लाभकारी उपज देने और काम के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाने इत्यादि की घोषणा की गई थी। 1991 में श्री नरसिंह राव के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार ने उदारीकरण की नई आर्थिक नीतियों को अपनाया। श्री राव ने नेहरू की दीर्घकालीन सोच के स्थान पर अल्पकालिक लाभ, उदारीकरण व ढांचागत समायोजन कार्यक्रमों पर ध्यान दिया।

उल्लेखनीय है कि 1991 में भारत में विदेशी ऋण संकट उत्पन्न हो गया था। खाड़ी युद्ध के परिणामस्वरूप तेलों की कीमत में वृद्धि हो गई थी। अप्रवासी ने विनिमय बाजार से अपनी पूंजी हटा ली थी। तब भारत सरकार को विश्व बैंक व अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष से 1991 में दीर्घकालीन विकास के लिए ऋण लेना पड़ा था। 1996 के बाद भारत में गठबंधन सरकारों का दौर शुरू हुआ। गठबंधन युग में राजनीतिक अस्थिरता से अल्पकालिक हित - प्रेरित राजनीति के प्रचलन में होने का पता चलता है इस के बाद 2014 तक कांग्रेस पार्टी के भ्रष्टाचार का दौर चला जिस से देश पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। लुट खसोट में लगी कांग्रेस ने देश की आर्थिक स्थिति को खराब कर दिया। 2014 में इस पर प्रतिबंध लगा जब केन्द्र में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में एक मजबूत सरकार आई जिस ने देश को एक नई राह दिखाई वह राह सब का साथ सब का विकास है। आर्थिक दृष्टि से भारत अब विश्व का छठा सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था हैं।

प्र. 10 सेंसरशिप (Censorship)

PS study center
http://psstudycenter.com/

उत्तर -

'सेंसरशिप (Censorship)' शब्द की उत्पत्ति, 443 बीसी में रोम में स्थापित सेंसर कार्यालय से हुई। इसके द्वारा नैतिकता को नियंत्रित करने और अनुष्ठानिक रूप से लोगों को शुद्ध करने का मकसद था। इस कार्यालय से 'नियंत्रण' शब्द आधुनिक रूप से परिभाषित हुआ, जिसने सार्वजनिक कृत्यों, विचारों की अभिव्यक्तियों और कलात्मक प्रदर्शनों को परखने, प्रतिबंधित और निषेध करने का कार्य किया। नियंत्रण को आज के समय में सामान्यतः एक अशिक्षित और अधिकाधिक दमनकारी दौर के अवशेष के रूप में माना जाता है। समाज के अन्तर्गत प्रसारित विचारों, सार्वजनिक संचार व सूचनाओं के माध्यमों का दमन या अशंक, 'नियंत्रण' (सेंसरशिप) कहलाता है। रितु मेनन का तर्क हैं, कि 'नियंत्रण' तब होता है जब एक ऐसा विचार व्यक्त करने वाली कला, जो वर्तमान मान्यताओं के तहत नहीं आती है, उसे जब्त कर लिया जाता है, उसमें कटौती या उसे वापस लिया जाता है या अनदेखा यह बदनाम किया जाता है अथवा दर्शकों की पहुंच से दूर कर दिया जाता है। नियंत्रण एक ऐसा तरीका हैं जिसका उपयोग राज्य या समाज सांस्कृतिक क्षेत्र में छल - कपट के माध्यम से अपनी सत्ता शक्ति को बनाए रखने के लिए करता है। समाज में 'क्या स्वीकार्य हैं', इसका निर्णय लेने में सांस्कृतिक क्षेत्र एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। क्योंकि सांस्कृतिक आधिपत्य कुछ शब्दों या कृत्यों को सभ्य और अन्य को असभ्य घोषित करता है और आगे चलकर इसके अर्थ व विचार को नियंत्रित करता है। सांस्कृतिक समझ के अतिरिक्त धर्म तानाशाही और बाजार जैसे कई अन्य स्त्रोत भी नियंत्रण हेतु उपयोग हो सकते हैं।